International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 15-04-2023, Accepted: 30-04-2023, Published: 16-05-2023
Volume 9, Issue 3, 2023, Page No. 19-21

मेहरुन्निसा परवेज की कहानियों में बदलते स्त्री–पुरूष संबंध–विविध संदर्भों में

डॉ. सुरुचि मिश्रा[1], सरोज मिश्रा[2]
[1] साहित्य एवं भाषा अध्ययन शाला, डी.पी. विप्र कॉलेज, बिलासपुर, छत्तीसगढ़, भारत
[2] शोधार्थी, अटल बिहारी वाजपेयी विश्वविद्यालय, बिलासपुर, छत्तीसगढ, भारत

सारांश
प्रस्तुत शोधपत्र में हिन्दी की आधुनिक वरिष्ठ कथाकार मेहरुन्निसा परवेज की कहानियों मे बदलते स्त्री पुरूष संबंधों को विविध संदर्भो में चित्रित किया गया है। साथ ही नारी संघर्ष एवं उसकी व्यथा को चेतनार्त्गत उद्घाटित करने का प्रयास किया गया है। सृष्टि के आरंभ से ही स्त्री – पुरूष का घनिष्ठ संबंध रहा है। एक–दुसरे को पूर्ण करने वाले ये दो अपने पृथक स्वभाव के कारण सृष्टि के क्रम में अपना अलग स्थान रखते हैं। पुरूष प्रारंभ से ही संवेदहीन महत्वाकांक्षी तथा वस्तुओं को अपने अधिकार में करने वाला रहा है, जबकि स्त्री–पुरूष संवेदनशील सदैव दैन्य भाव रखने वाली सुकोमल रही है। स्त्री की सुकोमलता और पुरूष की बलता, स्त्री को पुरूष के अधिकार में जाने में सहायक रही । स्वभाव का यह अंतर स्त्री–पुरूष संबंधों में भी दिखाई देता है। मेहरुन्निसा परवेज जी ने अपनी कहानियों में स्त्री–पुरूष के बदलते संबंधों में स्त्री की व्यथा–कथा का उल्लेख सूक्ष्मता से चित्रित किया है। स्त्री के विवाह के पश्चात् की समस्याओं का स्त्री की सामाजिक समस्याओं, विधवा समस्या, परित्यक्त नारी की नियति, बांझपन से जुझती नारी की व्यथा तथा परिवार में नारी की स्थिति के सूक्ष्म परतों को लेकर कथा–लेखिका ने अपनी कहानियों की कथा वस्तु और पात्र बनाकर प्रस्तुत किया है।

मूल शब्दः व्यथा, घनिष्ठ, दैन्य, खामोशी, करूणा वात्सल्य, विघटन, परित्यक्त बांझपन, संकिर्ण।

संसार में प्रत्येक प्राणी का जीवन विविधताओं से सराबोर होता है जिसमें मनुष्य सभी से उत्तम जीवन जीने का अधिकारी होता है। वह संवेदना की चेतना के कारण अलग भी है और अन्य से श्रेष्ठ भी है। मानव का स्वभाव ही उसकी प्रकृति बनी जो कालान्तर में पहचान बनकर प्रसिद्धी पायी। स्वतंत्रता मानव का स्वभाव ही नहीं अपितु अधिकार बनकर उभरा जो आज संघर्ष का कारण और आवश्यकता का पर्याय बन गया। नारी की महत्ता को समाज शास्त्रीय आधार मिलने पर नारी परिवार की इकाई बनीं। परिवार तथा समाज के परिप्रेक्ष्य में उसकी व्यक्तिगत मान्यताओं को स्वीकृति प्राप्त होने पर सामाजिक मूल्यों में बदलाव आया है। संयुक्त परिवार विघटन, विवाह के प्रति समकालीन दृष्टि, प्रेम एवं यौन संबंधी नवीन नैतिकता, स्त्री–पुरूष संबंधों में अलगाव के रूप में दिखाई देता है। आज सामाजिक संबंधों के नाम पर प्रेम, स्नेह, करूणा, वात्सल्य सेवा इत्यादी भावनात्मक मूल्यों में कोरी कृत्रिमता ही रह गई है। पाप–पुण्य की भावनाएँ धर्म से निर्धारित न होकर तार्किक आधार पाने को आतुर हैं। काम–भावना को षरीर की सहज स्वाभाविक भूख मानते हुए इसे नीति–अनीति, धर्म–अधर्म से जोड़ा जाना व्यर्थ माना जाने लगा है।

बदलते स्त्री पुरूष संबंध

आज स्त्री पुरूष संबंधों के दायरे बदल गए हैं। आधुनिकता और पाश्चात्य सभ्यता का अनुकरण करने के कारण स्त्री पुरूष संबंध भी बदल रहे हैं। भारतीय समाज पुरूष प्रधान संस्कृति को मानती आयी है। पुरूष नारी के प्रति संकुचित भावना रखता है। 'जीवन मंथन' कहानी की नायिका नंदिता अपने प्रेम को पाना चाहती है। उसे अमित का प्रेम मिलता है, किन्तु विवाह के बाद नंदिता आगे की पढ़ाई के बारे में अमित से कहती है, तब अमित मना कर देता है और कहता है– ''कैरियर! औरत का कैरियर पुरूष से अलग कहॉ है? जब औरत घर संभालती है तभी पुरूष बाहर ढ़ंग से काम कर पाता है।''[1] नंदिता ने सब कुछ अमित के लिए खो दिया था, किन्तु अमित ने कभी भी नंदिता की भावनाएँ नहीं समझी। यहॉ पुरूष की संकिर्ण मनोवृत्ति के दर्शन होते हैं।

वर्तमान समय में शहरीकरण के बढ़ने और एकल परिवार प्रणाली के चलते, पति पत्नी एक–दूसरे से बहुत जल्दी ऊब जाते हैं, ऐसी स्थिति में उनके मध्य तीसरे स्त्री या पुरूष के आ जाने से पति अथवा पत्नी सहज ही उसकी तरफ आकर्षित हो जाते हैं, किंतु यह नया रिश्ता पति–पत्नी के मध्य वैवाहिक जीवन की नींव को हिलाकर रख देता है।

हमारी भारतीय संस्कृति में पति और पत्नी से विवाह के समय यह वचन लिया जाता है कि वे एक–दूसरे के प्रति एक निष्ठ रहेंगे, स्त्री को यह वचन हमारे समाज द्वारा याद दिला दिया जाता है, किंतु पुरूष के लिए बंधन शिथिल रहते हैं। ऊब की स्थिति में पत्नी अपना मन घर के कामों और बच्चों में लगाने का प्रयत्न करती है, किंतु पुरूष का कार्यक्षेत्र बाहर होने के कारण उसे यह मौका मिल जाता है। 'खामोशी की आवाज' एक ऐसी कहानी है, जो अनु के जीवन को बर्बाद कर देती हैं– ''दोनों को अपने मनोरंजन के लिए तीसरे व्यक्ति की आवश्यकता थी वरना उन्हें जरूरत ही महसूस नहीं होती थी शायद, यह हर पति–पत्नी की ट्रेजडी है जिसे कुछ लोग समझकर इस ऊब को दूर करने की कोशिश करते हैं और कई इस ऊब का शिकार होकर अपनी जिंदगी ही तबाह कर लेते हैं और यह ऊब बेल की तरह फैलकर उसके जीवन का सारा रस खिंच लेती है। इसी का शिकार रमेश और अनु थे। अनु को मैं सूचित करती और वह सीधे–सादे बच्चों की तरह झट तैयार होकर घूमने निकल पड़ती, साथ हो लेती। रमेश का हर बात में, हर समय झूठे ही अहमियत देना मुझे अच्छा लगता था। शायद यह मेरे मन की कमजोरी थी या मैं अनु की गृहस्थी की ऑच में अपने हाथ सेंक लेना चाहती थी। मुझे अनु की गृहस्थी में एडजस्ट होना भला–सा लगा था, अनु के मन में मेरे प्रति ईर्ष्या जाग चुकी थी और उसे खिझाने में, जलाने में मुझे मजा मिल रहा था।''[2] लेखिका ने एक स्त्री भी किस तरह दूसरी स्त्री के साथ छलावा कर पति–पत्नी के रिष्तों में कड़वाहट ला सकती है, का मार्मिक चित्रण किया है।

'जीवन–मंथन' कहानी की नायिका नंदीता अपने पति से अपने अधिकार की मांग करती है, वह केवल घर की चारदीवारी में न रहकर बाहर जाकर अपनी पहचान बनाना चाहती है, वह कहती

है– ''पत्नी होने के नाते मुझे भी साथ जाने का, तुम्हारे बिजनेस में साथ जुड़कर काम करने का अधिकार मिलना चाहिए। मुझमें और मॉजी में अंतर होना चाहिए। मैं पढ़ी–लिखी हूँ। तुमने ब्याह के बाद घर में पटक रखा है। मेरे लिए घर की सीमाएँ टूटनी चाहिए।''[3] इस प्रकार यदि नारी अपने अधिकारों से परिचित है साथ ही वह उसके लिए आवाज उठाए तो स्त्री–पुरूष संबंधों में घनिष्ठता लुप्त हो जाती है और टकराव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

इस प्रकार देखा जा सकता है कि कहीं–न–कहीं हमारी सामाजिक व्यवस्था ऐसी है कि नारी का आत्मावलंबी होना कभी–कभी उसके लिए ही परेशानी का कारण बन जाता है। मेहरून्निसा परवेज जी की कहानियों में न केवल परिस्थितियों से सताई हुई नारियों से रूबरू होते हैं, बल्कि इन परिस्थितियों से बाहर निकलने वाली तथा चेतना–संपन्न नारियों के भी दर्षन होते हैं।

विधवा एवं परित्यक्त नारी की पीड़ा

हमारे समाज में एक स्त्री का विधवा होना अत्यंत ही भयावह होता है। हमारी सामाजिक व्यवस्था ऐसी है कि विधवाओं तथा परित्यक्त नारियों का बहुत अधिक शोषण होता है। आधुनिक काल से पूर्व विधवा को पुनर्विवाह करने की अनुमति नहीं थी, या तो उसे पति के साथ सती होना पड़ता था या फिर एक कठिन जीवन की सजा उसे दी जाती थी, जिसमें वह सफेद वस्त्र धारण कर, जमीन में पुआल बिछाकर, सादा भोजन कर केवल ईश्वर में अपना ध्यान लगाती थी, सांसारिक सुख से उसका नाता खत्म कर दिया जाता था, किंतु आधुनिक काल में विधवा के जीवन में सुधार आया है और पुनर्विवाह होने लगे है। जो स्त्रियॉ विवाह नहीं करना चाहती वे नौकरी कर अपना जीवन चलाती हैं। पर आज भी उनकी संपूर्ण समस्याएँ खत्म नहीं हुई हैं, क्योंकि आज भी परंपरावादी परिवारों में विधवा का जीवन पहले की तरह ही भयावह बना हुआ है। 'जीवन–मंथन' कहानी की नायिका नंदिता के पति की मृत्यु के पश्चात् उसके परंपरावादी परिवार की बहु होने के कारण विधवा जीवन जीने के लिए मजबूर हो जाती है– ''उसके हरे–भरे उपवन में अकाल पड़ गया था। एक ऐसा अकाल, जो समाज ने, रिश्तेदारों ने उसके अपने जीवन में पैदा कर दिया था। अब वह सारे सुखों से, शुभकार्यों से वंचित कर दी गई थी। उसकी हरी–भरी जवान चौबीस बरस की देह सूख गई थी। अब उसके लिए कोई भी शुभ कार्य, श्रृंगार सब वर्जित था। वह अपशकुनी हो गई थी। सबकी ऑखों का भाव देखते–देखते बदल गया था। रिश्तों के रहस्य उसके सामने अनावृत्त होते जा रहे थे। सब कुछ वही था, पर जैसे सब बदला–बदला सा लगने लगा था।..... औरत का भाग्य! एक के साथ सारा कुछ था, संसार था और उसके न रहने पर जैसे वह अछूत–सी हो गई थी। किसी पर अधिकार नहीं। उसकी अपनी कोई औकात नहीं थी। दूध में पड़ी मक्खी–सी हो गई थी। सारा दूध विषैला हो गया था– फेंकने के काबिल।''[4] लेकिन नायिका नंदिता एक शिक्षित युवती है वह अपने अधिकारों से परिचित है साथ ही उसके लिए आवाज भी उठाती है।

लेखिका की इस कहानी से स्पष्ट है कि हमारा समाज किस प्रकार एक स्त्री को उसके पति की मृत्यु के पश्चात् जीते–जी मृत्युदंड दे देता है, उसके जीवन के सारे रंग उसके पति के जाते ही उससे छीन लिए जाते हैं और नारी को अकेलेपन के दलदल में धकेल दिया जाता है।

नारी घर में भेदभाव तो सहती ही है, साथ–ही उसे बाहर निकलकर भी सुख नहीं मिलता। हर कोई उसे ललचाई नजरों से देखता है, हर व्यक्ति उसे अपना बनाने तथा उसे झुकाने में अपने को बड़ा मानता है। लेखिका ने अपनी कहानी में ऐसी नारी पात्रों को भी स्थान दिया है, जो मजबूर होकर बाहर निकलती हैं, लेकिन वहॉ उन्हें बिछ जाने को मजबूर किया जाता है। 'बौना–मौन' कहानी की नीतू अपने पति की मृत्यु के बाद उसकी पेंशन के पैसे लिए ऑफिस के चक्कर काटती है किंतु साहब उसे हर बार घुमाता रहता है और उस पर बुरी नजर भी रखता है। जब वह यह बात अपने मित्र के बताती है, तो वह कहती है– ''इतना कमजोर बनने से काम नहीं चलेगा। जो घोड़ी लात मारती है, सवार उसे उतना ही अच्छा समझता है। यार, अब अपना यह पिनपिनाना छोड़ दे। उस साहब के ऑफिस मत जा तू, उसे अपने घर खाने पर बुला ले। देख, कल तेरी फाइल ठीक होकर पटरी पर लग जाएगी।''[5] इस प्रकार लेखिका ने अपनी कहानियों में नारी–पात्रों के माध्यम से उनके साथ होने भेदभाव, शोषण तथा अनुचित व्यवहार को चित्रित किया है। ये नारी–पात्र स्वयं को इस वातावरण से मुक्त नहीं कर पाती है। किंतु नीतू इन मर्यादाओं के बंधन–मुक्त हो अपने जीवन जीने का मार्ग ढूँढ़ती है। वह सोचती है– ''वह दूसरों के सिखाए रास्ते पर कब तक चलती रहेगी? अपना रास्ता वह क्यों नहीं चुन सकती? दुनिया में जीने का, रिश्तों से जुड़ने का, क्या इतना बड़ा ब्याज इंसान को देना पड़ता है?''[6]

एक नारी को अपने पिता के घर में जो अधिकार प्राप्त नहीं होते, वह सोचती है कि वे अधिकार पति से प्राप्त होंगे, किंतु उसे वहॉ भी निराशा हाथ लगती है। पति से छोड़ी हुई नारी को समाज के साथ–साथ माता–पिता भी नहीं अपनाते, तब एक नारी को चाहिए कि वह स्वयं इतनी सक्षम हो कि उसे किसी के सहारे की आवश्यकता न हो। लेखिका की कहानी 'ढ़हता कुतुबमीनार' की नायिका सपना भी एक ऐसी ही नारी है – ''वह एक छोटे से अखबार के दफ्तर में अपनी एक दोस्त के सहारे काम तलाशने में सफल हो गई थी। उसे खड़े होने के लिए बस थोड़ी – सी जगह ही तो चाहिए थी। जहॉ लड़ाई में वह सब कुछ हार गई थीं, वहॉ यह एहसास क्या कम था कि वह एक बेजान, निर्जीव वस्तु नहीं है, उसके भी जज्बात हैं, उसकी भी भावनाएँ हैं।''[7]

इस प्रकार हम देखते हैं कि मेहरून्निसा परवेज की कहानियों की विधवा एवं परित्यक्ता नारी किस प्रकार अपने साथ हो रहे अन्याय का विरोध करती है। वह किस प्रकार दासता को अस्वीकार करने का प्रयत्न करती है, कभी–कभी वह परिस्थितियों के साथ समझौता कर लेती है, तो कभी–कभी संघर्ष करती है। लेखिका ने नारी की दषा को सफलतापूर्वक प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है।

बॉझपन के कारण छटपटाती नारी

स्त्री का मॉ बनना उसकी पूर्णता और स्त्रीत्व का गुण माना जाता है, स्वयं स्त्री भी स्वयं को तभी पूर्ण मानती है, जब वह मॉ बनती है। जो स्त्री किसी कारणवश मॉ नहीं बन पाती, उसे बॉझ कहकर पुकारा जाता है। बॉझ शब्द बंजर शब्द से ही निकला है, जो जमीन फसल पैदा नहीं करती उसे बंजर कहा जाता है और जो स्त्री बच्चे पैदा नहीं करती उसे बॉझ। समाज में उस स्त्री से कोई भी शगुन के कार्य नहीं कराए जाते, उसके पास अपना बच्चा नहीं छोड़ा जाता। यह एक स्त्री के लिए कितने अन्याय की बात है कि हमारे समाज के अंधविश्वास के कारण उसे समाज से काट दिया जाता है। 'बंद कमरों की सिसकियॉ' कहानी में मीना को कोई संतान नहीं है, इस कारण वह किसी से मिलती–जुलती नहीं, किसी के यहॉ आती–जाती नहीं– ''उस दिन बड़ी मुश्किल से वह गई थी मिस्टर राय के यहॉ। औरतों की भीड़ के साथ वह भी मिस्टर राय के झूले में बच्चे के पास शगुन करने गई, तो उसकी सास ने टोका दिया, अरे! तुम नहीं, शगुन बच्चों की मॉ करती है। उसकी छोटी–छोटी ऑखें सिकुड़कर रह गई थी। मन के भीतर कोई बडे जोड की मथनी चला रहा था। कितनी चोट लगी थी इस घटना से और बांझपन का बोझ पहली बार उसके मन को दबाने लगा था।''[8] लेखिका ने यहॉ एक ऐसे हिंदू समाज

का चित्रण किया है, जहॉ बचपन से ही नारी के भीतर इस प्रकार के संस्कार डाल दिए जाते हैं, क्योंकि हिंदू धर्म में विवाह का प्रमुख उद्देश्य संतान उत्पन्न करना रहा है। अतः जिस स्त्री को संतान नहीं होती वह अभिशप्त मानी जाती है और उसे शुभ कार्यों से वंचित रखा जाता है।

एक नारी के मॉ न बन पाने के कारण उसके जीवन में टूटन, घुटन, रिक्तता तथा विवशता आ जाती है। पति–पत्नी के मध्य अकेलेपन की स्थिति निर्मित हो जाती है। मानसिक विकृति जन्म ले लेती है तथा परिवार में बिखराव आ जाता है।

'बंजर दुपहर' की नायिका सपना के मॉ न बन पाने के कारण पति–पत्नी में दूरी तथा अकेलापन की स्थिति निर्माण होती है। दुपहर के समय सपना घर पर अकेली रहती है। पति अध्यापक है जब वे शाम को घर आते हैं तो उन्हें अपनी सुध नहीं रहती। ''अपने अकेलेपन के कारण सपना पति के दोष निकलती रहती है।''[9] वास्तव में वे एक दूसरे की जरूरत को मजबूरी में निभा रहे हैं। इस प्रकार सपना टूटती है।

अंतर्जातीय विवाह के कारण उत्पन्न समस्याएँ

अंतर्जातीय विवाह करना हमारे समाज में वर्जित है, किंतु वर्तमान समय में पाश्चात्य शिक्षा, संचार के माध्यमों तथा लडके–लडकियों की साथ–साथ शिक्षा ग्रहण करने के कारण अंतर्जातीय विवाह का चलन बढ़ गया है, इसका प्रमुख कारण हमारे समाज में दहेज–प्रथा का होना भी है। मेहरून्निसा परवेज ने अपनी कहानियों में बहुत सी नारी–पात्रों को अंतर्जातीय विवाह करते हुए दिखाया हैं, किंतु ससुराल वालों को जब तक दहेज का धन प्राप्त नहीं होता, तब तक वे उस बहु को अपना नहीं पाते हैं। एक नारी के अपने मायके के साथ–साथ अपने ससुराल वालों का भी विरोध झेलना पड़ता है, इसका एक कारण यह भी है कि ससुराल वाले अपने बेटे को तो स्वीकार कर लेते हैं, किंतु बहू को नहीं अपना पाते।

'अपने–अपने लोग' कहानी की नायिका सुमन ने भी अंतर्जातीय विवाह किया है और उसके ससुराल वाले अपने बेटे को अपना लेते हैं, किंतु सुमन को तब तक नहीं अपनाते, जब तक कि वह उन पर रूपये खर्च नहीं करती। इसके बावजूद भी वह जब अपनी बेसहारा मॉ को अपने साथ रखना चाहती है, तो उन्हें इस बात पर आपत्ति रहती है, इस पर सुमन की बाजी उन्हें समझाती है, वे कहती हैं– ''कौन से संस्कार? कौन सा समाज? मैनें कैलाश की बात की नकेल अपने हाथ में पकड़ ली, समाज तो उसी दिन टूट गया था, जब अपने कायस्थ हाकर एक ब्राह्मण की लड़की से ब्याह किया था। समाज कहॉ है? कौन लोग हैं समाज में? समाज में आखिर हमीं लोग तो हैं। हम ही तो समाज को बढ़ाते हैं और अब जब तक हम एक नया समाज नहीं गढ़ेंगे, तो कौन सामने आएगा? अपनी कमजोरी को छुपाने के लिए हम समाज को दोशी ठहराते रहते हैं। हमें अपनी रसोई के लिए खुद ही तो ईंधन जोड़ना पडेगा ना! ऐसे ही अपनी समस्या भी हमें ही मिल–बॉट कर निपटानी होगी।''[10] इस प्रकार स्पष्ट है कि मेहरून्निसा परवेज की कहानियॉ की नारी–पात्र सामाजिक समस्याओं के प्रति जागरूक हैं, वे अपने आस–पास के परिवेश के प्रति जागरूक हैं तथा वे इन समस्याओं को खत्म करने का सकारात्मक प्रयास भी करती हैं।

उपसंहार

मेहरून्निसा परवेज की कहानियों के नारी–पात्र स्वयं चेतना संपन्न होकर समाज में भी जागरूकता लाने का प्रयत्न करती हैं। वह अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होती हैं तथा अन्य नारियों को भी जागरूक करती हैं। इनकी कहानियों की पात्र आर्थिक रूप से भी सक्षम हैं, वे अपने परिवार की जिम्मेदारी स्वयं उठाती है। समाज में बदलाव लाने नारी को शिक्षित करने, राष्ट्र के प्रति समर्पण की भावना, राजनीतिक सूझ–बूझ इनकी कहानियों की नारी–पात्रों में सहज रूप से दिखाई देती है।

मेहरून्निसा जी ने अपने नारी–पात्रों के जिस प्रकार गढ़ा है, हम कह सकते हैं कि अपने आस–पास के वातावरण के प्रति जो उनके अनुभव रहे, उसका निचोड़ हमें उनमें देखने को मिल जाता है।

संदर्भ सूची

1. परवेज, मेहरून्निसा. लाल गुलाब. दिल्ली : प्रभात प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2011. पृ. 92
2. परवेज, मेहरून्निसा टहनियों पर धूप। दिल्ली : वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण 1977, पृ. 39
3. परवेज, मेहरून्निसा. समर. नई दिल्ली : ग्रंथ अकादमी, प्रथम संस्करण 2002, पृ. 70
4. परवेज, मेहरून्निसा. समर. नई दिल्ली : ग्रंथ अकादमी, प्रथम संस्करण 2002, पृ. 72
5. परवेज, मेहरून्निसा, फाल्गुनी. दिल्ली : पराग प्रकाशन, प्रथम संस्करण 1978, पृ. 91
6. परवेज, मेहरून्निसा. फाल्गुनी. दिल्ली : पराग प्रकाशन, प्रथम संस्करण 1978, पृ. 38
7. परवेज, मेहरून्निसा. ढ़हता कुतुबमीनार. दिल्ली : सत्साहित्य प्रकाशन, प्रथम संस्करण 1992, पृ. 18
8. परवेज, मेहरून्निसा. आदम और हव्वा. दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, प्रथम संस्करण 1972, पृ 132
9. कुमार, डॉ. सरिता, महिला कथाकारों के कथा साहित्य में प्रेम का स्वरूप। पृ. 136
10. परवेज, मेहरून्निसा. अम्मा. दिल्ली : ज्ञान गंगा, प्रथम संस्करण 1997, पृ. 154.